कहानी 'उसने कहा था' में कथित प्रेम तत्त्व की संदिग्धता

डॉ. सम्राट् सुधा

बी. एस. एम. पी. जी. कॉलेज, रुड़की, पिन –247667, उत्तराखंड

मोबाइल नंबर : 9412956361

ई–मेल : samratsudha66@gmail.com

शोध सारांश :

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' को प्रेमकथा कहना उचित नहीं है। वस्तुतः 'उसने कहा था' मात्र नायक लहनासिंह के बचपन में सम्पर्क में आयी और जवानी में अनायास रूप से मिली सूबेदारनी के प्रति एकपक्षीय 'प्रेम' की कहानी है, जिसे इस कथा के संबंध में तार्किक विश्लेषण से सहज ही समझा जा सकता है।

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' को हिन्दी प्रेमकथाओं में एक अनुपम प्रेमकथा की मान्यता मिली है। वर्ष 1915 में 'सरस्वती' के जूनांक में प्रकाशित यह कहानी उस समय अपने कथ्य और शिल्प की दृष्टि से अभिनव मानी गयी थी, यद्यपि बंगला कथा–साहित्य में ऐसी कथावस्तुएँ तब तक पर्याप्त चर्चित हो चुकी थीं।

विचारणीय बात यह है कि 'उसने कहा था' क्या वास्तव में प्रेम की एक अमर कथा है या यह लहनासिंह के एकतरफा सच्चे प्यार और सूबेदारनी द्वारा उसे 'कैश' करने की दुःखद कथा मात्र है! कथ्य और शिल्प की दृष्टि से 'उसने कहा था' कितनी सशक्त है, इसे कतिप्रय अलोचकों के दृष्टिकोण से जान लेना समीचीन ही होगा।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'उसने कहा था' के संदर्भ में लिखा है– "संस्कृत के प्रकाण्ड प्रतिभाशाली विद्वान् हिन्दी के अनन्य आराधक श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की अद्वितीय कहानी 'उसने कहा था' सं. 1972 अर्थात् सन् 1915 की 'सरस्वती' में छपी थी। इसमें पक्के यथार्थवाद के बीच, सुरुचि की चरम मर्यादा के भीतर, भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यन्त निपुणता के साथ संपुटित है। घटना इसकी ऐसी है, जैसी बराबर हुआ करती है; पर उसके भीतर से प्रेम का एक स्वर्गीय स्वरूप झाँक रहा है–केवल झाँक रहा है, निर्लज्जता के साथ पुकार या कराह नहीं रहा है। कहानी भर में कहीं प्रेम की निर्लज्ज प्रगल्भता, वेदना की वीभत्स विधृति नहीं है। सुरुच के सुकुमार से सुकुमार स्वरूप पर कहीं आघात नहीं पहुँचता। इसकी घटनाएँ ही बोल रही हैं, पात्रों के बोलने की अपेक्षा नहीं।"[1]

सुशील कुमार फुल्ल 'उसने कहा था' सहित गुलेरी जी की अन्य पाँच कहानियों पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं–"गुलेरी जी कहानीकार नहीं थे और न ही कवि, इस आशय का प्रत्यक्ष संकेत उनके (आत्मकथ्य) में मिलता है। आचार्य शुक्ल ने 'उसने कहा था' को 'अद्वितीय' कहकर परवर्ती विद्वानों के लिए एक लीक बना दी, जिसे आज तक निरन्तर दोहराया जाता रहा है, परन्तु वास्तविकता यह है कि उनकी कहानियाँ समग्र रूप से देखे जाने पर कथ्य तथा कलात्मकता दोनों ही दृष्टियों से छोटी पड़ जाती हैं। आलोचकों ने जो आदर्श उनकी कहानियों पर आरोपित किये हैं, कहानियों का अवलोकन करते ही वे भुर–भुराकर बिखर जाते हैं। आलोचकों ने गुलेरी जी की रचनाओं को खूँटी समझकर, अपनी मान्यताएँ टाँगकर, उन्हें अमर कहानीकार घोषित कर दिया है। व्यक्ति गुलेरी को क्षणभर के लिए भुलाकर यदि उनकी कहानियों का परीक्षण करें, तो रचनात्मक कमजोरियाँ, अनावश्यक है–विस्तार, संयोजन की शिथिलता तथा रोमांस की ललक एवं मांसल चित्रण का मोह एकाएक स्पष्ट हो उठता है।"[3]

बच्चनसिंह इस कहानी पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं– "वस्तुतः यह कहानी (उसने कहा था) सोमनाथ के मन्दिर की मूर्ति की तरह आकाश में लटकी हुई प्रतीत होती है। यदि भावुकता का चुम्बक हटा लिया जाए, तो मूर्ति धरती पर खण्ड–खण्ड हो जाएगी। समीक्षकों ने उसकी भावुकता को ही विशेषता के रूप में ग्रहण कर लिया, क्योंकि वे स्वयं भावुक थे।"[4]

इस कहानी के कलेवर पर टिप्पणी करते हुए नन्दुलारे वाजपेयी लिखते हैं– "गुलेरी जी की 'उसने कहा था' कहानी बहुत लंबी ही है अधिक स्थान और समय घेरती है और कहानी के नवीन प्रतिमानों को देखते हुए विराट या महाकाव्यात्मक कहानी (एपिक स्टोरी) कही जा सकती है। लम्बी कहानियाँ प्रसादजी ने भी लिखी हैं और प्रेमचन्द जी ने भी। इन दोनों की कहानियों में' उसने कहा था' की–सी बोझिल विशालता नहीं है।"[5]

वहीं जैनेन्द्र कुमार का यह कथन द्रष्टव्य है– "गुलेरी जी विलक्षण विद्वान् थे... गुलेरी जी न केवल विद्वता में अपने समकालीन साहित्यकारों से ऊँचे ठहरते हैं, अपितु एक दृष्टि से वह प्रेमचन्द से भी ऊँचे साहित्यकार हैं। प्रेमचन्द ने समसामयिक स्थितियों का चित्रण तो बहुत बढ़िया किया है, पर व्यक्ति मानस के चितेरे के रूप में गुलेरी का जोड़ नहीं है। प्रेमचन्द अपने साहित्य में सामाजिक सम्बन्धों के चित्रण से आगे नहीं बढ़े, जबकि गुलेरी ने 'उसने कहा था' में ही मानवतावाद की आत्मा का स्पर्श कर लिया है।"[6]

प्रश्न 'उसने कहा था' के 'प्रेममय' कथानक का है। इस कहानी में जब लड़का (लहनासिंह) और लड़की (बाद में सूबेदारनी) मिलते हैं, तो उनकी आयु क्रमशः बारह और आठ वर्ष होती है। कहानी का यह अंश द्रष्टव्य है–"लहनासिंह बारह वर्ष का है। अमृतसर में मामा के यहाँ आया हुआ है। दही वाले के यहाँ, सब्ज़ी वाले के यहाँ, हर कहीं उसे आठ वर्ष की लड़की मिल जाती है। जब वह पूछता है कि तेरी कुड़माई हो गयी? तब 'धत्' कहकर वह भाग जाती है। एक दिन उसने वैसे ही पूछा तो उसने कहा–'हाँ, कल हो गयी। देखते नहीं यह रेशम के फूलों वाला शालू?' सुनते ही लहनासिंह को दुःख हुआ। क्रोध हुआ। क्यों हुआ?"

ऊपर उद्धृत कथा–संवाद से यह मान लेना कि उस आठ साल की लड़की से बारह साल के लड़के लहनासिंह को सचमुच 'गम्भीर प्रेम' हो गया था, भला कितना उचित है? कहानी में आगे स्वयं इसका उत्तर मिलता है–"पच्चीस वर्ष बीत गये। अब लहनासिंह नं. 77 राइफल्स में जमादार हो गया है। उस आठ वर्ष की कन्या का ध्यान ही न रहा। न मालूम वह कभी मिली थी या नहीं।" परन्तु पच्चीस वर्ष पश्चात् भी उस लड़की (जो अब सूबेदारनी है) की स्मरणशक्ति की प्रशंसा करनी पड़ेगी कि अपने पति (सूबेदार) के साथ आये लहनासिंह को वह तुरन्त पहचान लेती है; साथ ही अपने पति को उससे मिलने की इच्छा भी जता देती है– "सूबेदार का गाँव रास्ते में पड़ता था और सूबेदार उसे बहुत चाहता था। जब चलने लगे, तब सूबेदार बेड़े में से निकलकर आया। बोला–लहना, सूबेदारनी तुमको जानती है। बुलाती है। जा मिल आ।" पच्चीस वर्ष बाद यूँ अपने से चार बड़े लहनासिंह को सूबेदारनी द्वारा पहचान लेना अत्यन्त अस्वाभाविक है, परन्तु उसके द्वारा लहनासिंह को पच्चीस वर्ष पूर्व का स्मरण कराना नारी–मनोविज्ञान के एक और पक्ष को उद्घाटित करता है–

"मुझे पहचाना?"

"नहीं।"

"तेरी कुड़माई हो गयी?–धत्–कल हो गयी... देखते नहीं रेशमी बूँटों वाला शालू– अमृतसर में।"

विचारणीय बात यह है कि पच्चीस वर्ष पश्चात् सूबेदारनी लहनासिंह को पहचान तो भली–भाँति लेती है, उसे स्वयं को पहचानने के लिए नितान्त भावुकतापूर्ण संवाद में शब्दशः स्मरण भी करा देती है, परन्तु वह न तो लहनासिंह का औपचारिक कुशलक्षेम ही पूछती है और न ही उसके परिवार आदि का हालचाल! वास्तविकता यह है कि मनुष्य जब अपने किसी बड़े स्वार्थ को लेकर दूसरे से मिलता है, तो दूसरे की पीड़ा या समग्रतः दूसरे का जीवन उसके लिए कोई अर्थ नहीं रखता है। सूबेदारनी का मंतव्य

उस समय पूर्णतः उद्घाटित हो जाता है, जब लहनासिंह को पच्चीस वर्ष पूर्व की बातों का स्मरण कराती हुई वह विशुद्ध स्वार्थमय वादा उससे अवचेतन रूप से करा लेती है– "मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया । एक काम कहती हूँ। मेरे तो भाग फूट गये । सरकार ने बहादुरी का ख़िताब दिया है, लायलपुर में जमीन दी है, आज नमकहलाली का मौका आया है । पर सरकार ने हम तीमियों की एक घंघरिया पलटन क्यों न बना दी, जो में भी सूबेदारजी के साथ चली जाती? एक बेटा है । फ़ौज में भरती हुए उसे एक ही बरस हुआ । उसके पीछे चार हुए, पर एक भी नहीं जिया (सूबेदारनी रोने लगती है) । मेरे भाग । तुम्हें याद है, एक दिन तांगे वाले का घोड़ा दहीं वाले की दुकान के पास बिगड़ गया था । तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे । आप घोड़ों की लातों में चले गये थे और मुझे उठाकर तख़्ते पर खड़ा कर दिया था । ऐसे ही इन दोनों को बचाना । यह मेरी भिक्षा है । तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ ।" कहानी 'उसने कहा था' का ऊपर उद्धृत संवाद सूबेदारनी के हृदय से समस्त भावों को गहनता से उद्घाटित करता है । उक्त संवाद के आधार पर देखें तो सूबेदारनी को अपने पति और पुत्र की; यहाँ तक कि अंग्रेज सरकार के प्रति 'नमकहलाली' तक की चिन्ता है, परन्तु लहनासिंह के प्रति कोई संवेदनशीलता नहीं है । सूबेदारनी का अब अपना परिवार है, पति की बहादुरी से प्रसन्न हो सरकार ने जमीन दी, तो सूबेदारनी के हृदय में नमकहलाली हिलोर लेने लगी, परन्तु बचपन में तांगे के नीचे आने से बचाने वाले लहनासिंह के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना तो दूर, उससे अपने पति और पुत्र की जीवन– रक्षा की 'भिक्षा' ही माँग ली! अपने प्राण बचाने का स्मरण दिलाकर सूबेदारनी 'ऐसे ही इन दोनों को बचाना', कहकर 'ऐसे ही' के माध्यम से यह प्रच्छन्न रूप से कह देती है कि भले ही अपने प्राण देकर करना, परन्तु मेरे पति और पुत्र की रक्षा करना!! इस प्रकार बचपन की यदा–कदा होने वाली भेंटों के पच्चीस वर्ष पश्चात् सूबेदारनी को लहनासिंह और उसके द्वारा स्वयं को बचाया जाना तो ध्यान रहता है, परन्तु उसकी 'भिक्षा' से यह स्पष्ट हो जाता है कि लहनासिंह के प्रति न तो उसकी कोई संवेदना पच्चीस वर्ष पूर्व थी और न ही वर्तमान में अब, जब वह युद्ध में जाते लहनासिंह से अपने पति व पुत्र की रक्षा की बात, बिना उसके प्रति कोई चिन्ता व्यक्त किये, कह देती है ।

विश्वविख्यात फ्रेंच लेखिका सिमोन द बोउवार लिखती हैं" पुरुषों से अधिक स्त्रियाँ बचपन की यादों को संजोये रखती हैं। बचपन में मैं माता–पिता के संरक्षण में स्वतंत्र थी, यह उन्हें याद रहता है । भविष्य उनके सम्मुख होता है । वे अपने को अधिक सुरक्षित नहीं समझतीं । वे अनुचर व वस्तु–रूप में वर्तमान में बन्दी होती हैं । एक समय वे विश्व को विजित करना चाहती थी, पर अब वे आम वस्तु के रूप में बदल गयी हैं । अरबों पत्नियों और घर सम्भालने वाली गृहिणियों में से वे भी अब एक होती हैं ।"

सीमोन द बोउवार के उपर्युक्त कथन से सूबेदारनी (एक आम स्त्री) के मनोभावों का कारण तो स्पष्ट होता है, परन्तु इससे कहीं भी उसकी छवि एक प्रेममयी स्त्री के रूप में नहीं उभरती है । कहानी में क्या यह अधिक सुखद नहीं होता कि सूबेदारनी लहनासिंह से मिलने पर उसे बचपन की बातों का स्मरण तो कराती, परन्तु युद्ध में जाते, कभी अपने प्राणों की रक्षा करने वाले, उस निश्छल प्रेमी से यह वादा भी करा लेती कि तुम्हें इस युद्ध में जी– जान से लड़कर भी मेरे लिए जीवित वापिस आना है! युद्ध में यद्यपि कौन मरेगा और कौन बचा रहेगा, यह भला कौन कह सकता है, तथापि सूबेदारनी द्वारा लहनासिंह को बचपन की बातों का भावुकतापूर्ण स्मरण कराकर जैसे उसके प्राणों को बचाया था, 'ऐसे ही' अपने पति और पुत्र के जीवन की रक्षा की 'भिक्षा' माँगना क्या सूबेदारनी का घोर स्वार्थमय और कुटिल होना प्रमाणित नहीं करता है?

दूसरी ओर लहनासिंह सूबेदारनी की 'भिक्षा' को पूर्ण करने के लिए आत्मोत्सर्ग करने में कोई कमी नहीं छोड़ता है । सूबेदारनी के पुत्र को युद्ध क्षेत्र में बुखार हो जाने पर वह उसे अपनी जरसी उतारकर पहना देता है, उसे अपने दो कम्बल और बुरानकोट भी पहना देता है; बोधा सिंह के पूछने पर भी अपनी जाँघ में लगी गोली के विषय में नहीं बताता; सूबेदार जब पट्टी बाँधना चाहता है, तो 'थोड़ा घाव है, सबेरे देखा जाएगा' कहकर टाल देता है और जब सूबेदार उसे छोड़कर नहीं जाते, तो 'तुम्हें बोधा की क़सम है और सूबेदारनी की सौगन्ध है, जो इस गाड़ी में न चले जाओ', कहकर उन्हें जाने को विवश करता है ।

लहनासिंह उपर्युक्त समस्त कार्य वस्तुतः सूबेदारनी की इस 'भिक्षा' की पूर्ति के लिए करता है, जो वह उससे युद्ध में जाने से पूर्व अपने पति और पुत्र की रक्षा, वचपन में जैसे उसकी (सूबेदारनी की) की थी 'वैसे ही' करने के रूप में माँगती है अथवा कह सकते हैं उसके भावुक हृदय को भाँपकर अपने विशुद्ध स्वार्थ में लिप्त होकर माँग लेती है! लहनासिंह अपने अन्तिम समय में भी सूबेदारनी द्वारा माँगी गयी विशुद्ध स्वार्थपूर्ण 'भिक्षा' को नहीं भूलता है। सूबेदार जब उसे छोड़कर जाने में झिझकता है, तो वह कहता है–"बोधा गाड़ी पर लेट गया? भला। आप भी चढ़ जाओ। सुनिए तो, सूबेदारनी होरां को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना और जब घर जाओ, तो कह देना जो उसने कहा था, वह मैंने कर दिया!"

निष्कर्ष :

कथा–शिल्प की दृष्टि से देखें, तो 'उसने कहा था' वास्तव में सर्वथा अनूठे शिल्प से युक्त अद्वितीय कहानी है, जिसमें 'फ्लैशबैक' (पूर्व स्मरण) के माध्यम से कथानक विस्तार लेता है, परन्तु इतना स्पष्ट है कि इस कहानी को प्रेमकथा कहना उचित नहीं है। वस्तुतः 'उसने कहा था' मात्र नायक लहनासिंह के बचपन में सम्पर्क में आयी और जवानी में अनायास रूप से मिली सूबेदारनी के प्रति एकपक्षीय 'प्रेम' की कहानी है, जिसमें लहनासिंह की सूबेदारनी के प्रति अतिशय भावुकता ही उभर कर सामने आती है और प्रेम–तत्त्व प्रायः गौण ही रहता है। यह सुस्पष्ट है कि 'उसने कहा था' एक प्रेमकथा नहीं है; साथ ही इसमें कथित प्रेम और इसके बारे में कथित प्रेम वास्तव में पूर्णतः संदिग्ध है !

संदर्भ

1. 'गुलेरी रचनावली', संपादक–डॉ. मनोहरलाल, पृ. 473
2. कहानी– 'घण्टाघर' (सन् 1904), 'धर्मपरायण रींछ' (सन् 1906), 'सुखमय जीवन' (सन् 1911), 'बुद्ध का काँटा' (सन् 1914), 'उसने कहा था' (सन् 1915), 'हीरे का हार' (सन् 1987), गुलेरी जी की रचनाएँ, 'गुलेरी रचनावली' संपादक–डॉ. मनोहरलाल, पृ. 486
3. 'गुलेरी रचनावली', संपादक–डॉ. मनोहरलाल, पृ. 479
4. वही, पृ. 475
5. वही, पृ. 473
6. वही, पृ. 473
7. सिमोन द बोउवार 'स्त्री : उपेक्षिता', प्रस्तुति–डॉ. प्रभा खेतान, पृ. 253